प्राक्कथन

मुझे हिन्दी विषय अपने स्कूल से ही प्रिय रहा है । यद्यपि मेरी मातृभाषा गुजराती है फिर भी मुझे अपने बाल्यकाल से ही हिन्दी के साथ एक आत्मीयता का अनुभव होता रहा है । इसलिये जब हायर सेकंडरी करने के बाद मैंने कलासंकाय में आगामी अध्ययन करने के लिये दाखला लिया तभी मैंने निश्चित किया था कि मैं हिन्दी विषय के साथ बी.ए. करुँगी । बी.ए. हिन्दी विषय में मेरे बहुत अच्छे मार्क्स आये थे । अतः मेरे माता-पिता ने मुझे हिन्दी विषय के साथ ही एम. ए. करने की भी अनुमति दे दी । इसी तरह से एम.ए. करने के बाद मन ने संकल्प किया कि मैं पी-एच-डी. के लिये संशोधन करुँ । और मैंने मन ही मन निश्चय किया कि मैं राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त पर ही कार्य करुँगी । न जाने क्यों मुझे अपने स्कूल जीवन से मैथिलीशरण गुप्त की कविताएँ बहुत अच्छी लगती थी । मैंने अपनी जिज्ञासा आदरणीय बाफना मेडम के सामने रखी । तब उन्होंने बताया कि वैसे तो गुप्तजी पर अनेक शोधकार्य हो चुके हैं किन्तु उन्होंने नवजागरण से प्रेरित होकर नारियों का एक विशेष प्रकार से जो वर्णन किया है, उसे लेकर कार्य किया जा सकता है । मैं अपने मुस्लिम समाज में भी नारियों की स्थिति देखती तो मुझे लगता था कि सच में ही नारियाँ कितनी उपेक्षित की जाती है; इस पुरुष प्रधान समाज में । गुप्तजी ने भी ऐसी ही पौराणिक और ऐतिहासिक उपेक्षिताओं को लेकर वर्तमान संदर्भ में उनका वर्णन करते हुए काव्य रचनाओं का सृजन किया और उस तत्कालीन युग में घर की चारदीवारी में बंद रहने वाली नारियों को उनके द्वारा एक संदेश पहुँचाया । यह सबे जब मेरे दिमाग में आया तब मैंने निश्चय किया कि मैं गुप्तजी द्वारा वर्णित नारी पर ही शोधकार्य करुँगी । और यही विषय लेकर मैंने अपना पी-एच.डी. का रजिस्ट्रेशन करवाया ।

वीरगाथा काल में नारी का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व न था । वह तलवार के बल पर अधिकार कर लेने की पुरुष की एक सचल सम्पति मात्र थी। भक्तिकाल में भी नारी केवल माया के रुप में प्रकट हुई । कृष्ण भक्ति-शाखा में राधा और गोपियों के रुप में तो नारी कुछ पूज्य अवश्य हुई; किन्तु वह उसका अबला रुप ही था, जो विरह के आँसू बहाती रही । राम-भक्ति शाखा में भी उसे कोई उच्च स्थान नहीं मिला । रीतिकाल में वह वासना की पुतली से अधिक कुछ न थी और कविता श्रृंगारिकता के स्तर पर उतर आई थी । द्विवेदी-काल में भी सुधारवादी द्रष्टिकोण से नारी का रुप विकसित न हो सका, परन्तु छायावाद ने नारी को नई आंखों से देखा और इस युग की नारी पूर्व-युगीन नारी से भिन्न है । वह स्वतंत्र सत्ता रखनेवाली है । १९ वीं शताब्दी में मानवतावादी सिध्धांतों का भली-भाँति विकास हुआ । प्रत्येक व्यक्ति की स्वाधीनता और अधिकार

की भावना ने नारी-आंदोलन को जन्म दिया । मानवतावाद से प्रेरित होकर जब देश के दीन-दलितों की ओर कवि द्रष्टि गई तो वह भारत की शताब्दियों से पीड़ित मानवी को न भुला सका ।

गुप्तजी प्राचीन हिन्दू पारिवारिक व्यवस्था को ही श्रेष्ठ मानते है और संयुक्त-परिवार व्यवस्था में विश्वास रखते है । वे स्त्रियों के व्यक्तित्व का आदर और उनमें स्वाभिमान का विकास चाहते थे । नारी भी पुरुष के समान ही सम्मान पाए अतएव वे 'नारी जीवन के यर्थार्थ चित्रण' पर अधिक बल देते है । उन्होंने नारी जीवन की पीड़ा को समझा है, महसूस किया है इसलिए वे नारी हृदय का मार्मिक चित्रण कर पाए । सामान्य मनुष्य से कवि हंमेशा दो कदम आगे होता है, उसकी सोचने समझने की संवेदना सामान्य मनुष्य से कहीं अधिक होती है । समाज में होते परिवर्तन उसके हृदय को गहराई के साथ तत्काल स्पर्श करते हैं । महाकवि युग की प्रवृत्ति से प्रमाणित होता है । इसलिए भारतीय नारी की ममता, आत्मयातना, अपमान और आँसुओं को जितना गुप्तजी समझते है, उतना बहुत कम कवि समझ पाए हैं । गुप्तजी की 'नारी' धरती पर रहनेवाली पग-पग पर यातना भोगती हुई और 'बर्बर पुरुष के तेज़ को अपने उदर में ढोती हुई नारी का वास्तविक रुप अंकित है ' । गुप्तजी वैष्णव कवि होने के नाते 'वैष्णव' सहानुभूति उनकी रचनाओं में देख सकते हैं । उनकी यह सहानुभूति और नारी का आत्मगौरव नारी वर्ग की उन्नति के लिए ही है । गुप्तजी आधुनिक युग के कवि है और आधुनिक युग नारी जागरण का युग है, नवोत्थान का युग है । सांस्कृतिक पुनरुत्थान के साथ नारी के प्रति अवज्ञा के द्रष्टिकोण में परिवर्तन आया तथा नारी पुरुष के साधना-मार्ग की बाधा नहीं अपितु, चैतन्य की जीवन शक्ति के रुप में प्रतिष्ठित हुई । ग्रार्हस्थिक गरिमा के साथ नारी के सम्मान में वृद्धि हुई । रीतिकालीन कवियों की भाँति नारी केवल श्रृँगार-चेतना का माध्यम मात्र नहीं रही और न उसके साधना मार्ग की बाधा ही । नारी नर के समकक्ष आकर खड़ी रही । प्रेरणा देनेवाली शक्ति तथा संसार की रमणीयता की वृद्धि करने में उसका चिरन्तर योग है । नारी के अशिक्षित एवं पगुं व्यक्तित्व के प्रति करुणा व्यक्त की गई, उसके त्याग में बलिदान ता स्तवन किया गया । आधुनिक युग की नैतिक एवं सामाजिक अनिवार्यताएँ नारीपात्रों के माध्यम से अपना प्रतिनिधित्व खोजती है । आधुनिक युग में उर्मिला, कैकेयी, मांडवी, श्रुतिकीर्ति जैसे पात्रों को नया आयाम मिला । आधुनिक कवियोंने इनको न केवल अपनी करुणा एवं सहानुभूति अर्पित की, बल्कि उनके व्यक्तित्व में निहित् सौन्दर्यस प्रेम, स्वाभिमान, क्षत्रियत्व, आत्मोसर्ग तथा राष्ट्र-भावना को भी विभिन्न कोणों से उजागर किया । नारी को परंपरित माता एवं पत्नी रुप के साथ-साथ शक्ति तथा

विद्रोह की तेजस्विनी प्रतिमूर्ति के रुप में भी देखा गया । अहल्या, मंथरा, शबरी, शूर्पणखां, सुमित्रा और कौशल्या सभी के व्यक्तित्व को परिवर्तित युग संदर्भ के अनुरुप नया संस्कार भी प्राप्त हुआ । महात्मा गांधीजी के अनुसार भारत की नैतिक एवम् आर्थिक प्रगति में नारी का महत्वपूर्ण योग है । भविष्य निर्मात्री नारी अपने संतानो पर उत्तम प्रभाव डाल सकती है । चरित्र-निर्माण में योग देनेवाली नारी के हाथ में ही भारत की समृद्धि निहित् है । इसलिए उन्होंने लिखा है –

> "Woman is sacrifice personified, when she does
> a thing in the right sprit, she moves mountains."●

नवयुवकों में और युवतियों में सामूहिक राष्ट्रचेतना को उत्पन्न करने की शक्ति नारी में है । नारी त्याग की साक्षात् मूर्ति है । स्वस्थ मनोदशा में वह पर्वत को भी हिला सकती है । कहावत है कि नारी अगर चाहे तो नर्क को स्वर्ग भी बना दें और स्वर्ग को नर्क । एक नारी के सत्कर्म से मनुष्य पर्वत के समान महान कष्टों को भी झेल सकता है । इस तरह कवि के विचार में पृथ्वी की समस्त शक्तियों के विकास के लिए नारी पत्नी, माता और सेविका के रुप में अनन्त प्रेरणा देनेवाली है ।

हिन्दी साहित्य जगत में सदीयों से लिखी जानेवाली कविता के अपने रंग-ढंग एवं माध्यम है । द्विवेदी युग के कवि श्री मैथिलीशरण गुप्तजी की काव्य-प्रतिभा जन्म-जात थी । उनके काव्यगत संस्कार पैतृक देन थी । द्विवदीजी के मार्गदर्शन में उनका काव्य और भी निखर कर सामने आया । जो कविताएँ गुप्तजी ने लिखी है वह अपने आप में सक्षम है । गुप्तजी के काव्य में प्राचीन, पौराणिक तथा ऐतिहासिक कथानकों का आश्रय लेकर उनमें नवीन उद्‌भावनाएँ जो प्राप्त होती है वह बेजोड़ है । उनके काव्य के विषय में भारतीय संस्कृति की देन है । उन्होंने अपने काव्य में नारी के चरित्र को हंमेशा उपर उठाने को प्रधानता दी है । वासुदेवशरण अग्रवालजी कहते है कि गुप्तजी के काव्य-मानस की प्रेरणा और प्रवृत्ति सोत चर्तुविध है । अतीत संस्कृति और कला का प्रेम उसका एक अंश है । वर्तमानयुग के प्रति आस्था और राष्ट्रीयता उसका दूसरा चरण है । समक्ष जीवन और उसके साथ जुड़ा हुआ कर्ममय प्रवृत्ति-मार्ग या कवि के शब्दों में कहे तो 'गेह-गौरव' उसका तीसरा अंश है । मानव की गरिमा या अनुभव या महिमा के प्रति आस्था और आशा एवं उसी आधार पर नर-नारायण का समन्वय व्यष्टि का समष्टि में पर्यवसान या भगवती परिभाषा में नर-नारायण का समन्वय, यह द्रष्टिकोण उसका चौथा अंश है ।

गुप्तजी का काव्य-क्षेत्र साधारण भारतीय जीवन का प्रतिरुप बनकर आया । कृषक, श्रमजीवी, युद्ध प्रथा, सत्याग्रह, विश्व बन्धुत्व आदि अनेक विषयों पर विचार किया है । नारी भावना के महत्व को प्रतिपादित करने के लिए काव्य की उपेक्षिता उर्मिला को उन्होंने प्रघान पर प्रदान किया ।

'भारत-भारती' में उन्होंने राष्ट्रीयता का स्वरुप प्रस्तुत किया। 'यशोधरा' में 'साकेत' की नारी-भावना का और अधिक विकास हुआ है। 'द्वापर' में आये हुए पात्रों का चरित्र-चित्रण अत्यंत मनोवैज्ञानिक और मार्मिक है। गुप्तजी राष्ट्रीय जागरण के उद्‌बोधक एवम् सांस्कृतिक चेतना के समर्थ गायक है। उन्होंने भारतीय नैतिकता का राष्ट्रीयता की और उन्मुख किया, पौराणिक आख्यानों को युगधर्म के सांचे में ढाल कर समसामयिक संदर्भो से जोड़ दिया। इस प्रकार काव्य को उन्होंने व्यापक भावभूमि प्रधान की। साथ ही, गुप्तजीने खड़ीबोली की पुष्ट और समृद्ध बनाया। उसे नयी अभिव्यंजना-शक्ति प्रदान की और उसमें साहित्यिक सौष्ठव उत्पन्न किया।

गुप्तजी का काव्य-फलक अत्यन्त व्यापक है। उनकी द्रष्टि एक ही साथ भारतीय जीवन के अतीत, वर्तमान और भविष्य-तीनों कालों की और थी। उनके काव्य में वेदों से लेकर समकालीन राष्ट्रीय, राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक जीवन के विविध पक्षों का समावेश है। गांधी-युग की प्रवृत्तियाँ गुप्तजी के कृतित्व में सहज ही पहचानी जा सकती है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध को अनुशीलन की द्रष्टि से छः अध्यायों में विभक्त किया गया है ।

मैथिलीशरण गुप्त आधुनिक युग में हिन्दी कविता के सुप्रद्धि कवि माने जाते है । स्वतंत्र भारत का प्रथम राष्ट्र कवि होने का गौरव गुप्तजी को प्राप्त है । **प्रथम अध्याय** में गुप्तजी के जन्म से मृत्यु तक के उनके सीधे-सादे जीवन की चर्चा की गई है अर्थात उनका जन्म, वंश-परिचय, बचपन, प्रारंभिक शिक्षा, विवाह-संस्कार, उनकी दिन-चर्या और खान-पान, जीवन और व्यक्तित्व का मूल्यांकन, मृत्यु आदि विषयों पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है । गुप्तजी की काव्य यात्रा की इस विशाल कालावधि में अनेक मौलिक रचनाएँ प्राप्त होती है । महाकाव्य, खण्डकाव्य, आख्यानक काव्य, मुक्तक काव्य, गीतिकाव्य आदि सभी प्रकारकी रचनाओं का समावेश हुआ है । इन सभी रचनाओं में प्राचीनता और नवीनता का अद्‌भूत संमिश्रण द्रष्टिगत होता है ।

द्वितिय अध्याय तत्कालीन परिस्थितियाँ-सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, साहित्यिक आदि को लेकर लिखा गया है । उन्नीसवीं शताब्दी का संघर्ष भारतीयों और अंग्रेजो के बीच का संघर्ष है । भारत में उस समय तक जागरण तथा स्वातंत्र्य की चेतना काफी फैल चुकी थी । महात्मा गांधीजी के नेतृत्व में भारत देश को आजादी प्राप्त हुई थी । तत्कालीन हिन्दी साहित्य भी गांधी-दर्शन और गांधी विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित हुआ । आलोच्य कवि गुप्तजी के काव्य और जीवन पर भी इन सांस्कृतिक आंदोलनों का गहरा प्रभाव पड़ा है । गुप्तजी ने सत्य और अहिंसा को रामभक्ति के अनुरुप ही ढाला है । उन्होंने मानवता, एकता आदि को प्रधानता दी है । भारतवर्ष के राष्ट्रीय इतिहास में सांस्कृतिक आंदोलन एवं उनके पुरस्कर्ताओं का अमूल्य योगदान है ।

तृतीय अध्याय में पूर्ववर्ती काव्य में नारी जीवन के चित्रण को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है । जिसमें वेदिककाल, आदिकाल, मध्यकाल और आधुनिककाल तक के कवियों ने नारी की जो प्रधानता प्रस्तुत की है उसका चित्रण है । चूँकि कवि की रचना अपने समयानुसार होती है । भारतीय संस्कृति में समयानुसार नारियों की परिवर्तनशील अवस्था देखने को मिलती है । वैदिककाल में नारी की अवस्था उन्नति की ओर अग्रसर थी, जो आगे चलकर नारी केवल घर की चारदिवारी तक सीमित रह गई । और बीसवीं शताब्दी तक आते-आते नारी फिर से अपना सम्मान पा सकी है । आधुनिक कवियों को नारी-भावना के निर्माण की ओर ले जाने वाले अन्य महत्वपूर्ण कारण है - नवजागरण की चेतना, अंग्रेजी शिक्षा और साहित्य का प्रभाव, मध्यकालीन नारी भावना के प्रति विद्रोह, समाज-सुधार की लहर का प्रभाव, नारी-आंदोलन का प्रभाव, इंडियन नेशनल कांग्रेस और राष्ट्रीय आंदोलन का प्रभाव । इन सभी ने किसी-न-किसी रुप में परिवर्तन करके उनका द्रष्टिकोण उदार और व्यापक बनाया है । आधुनिक कवियोंने नारी को न केवल अपनी करुणा एवं सहानुभूति ही अर्पित की, अपितु उसके व्यतित्व में निहित् सौन्दर्य, प्रेम, स्वाभिमान, क्षत्रियत्व, आत्मोत्सर्ग तथा राष्ट्र-भावना को भी विभिन्न कोणों से उजागर किया है ।

चतुर्थ अध्याय में गुप्तजी के काव्य में नारीजीवन का चित्रण प्रस्तुत किया गया है । प्रबन्ध काव्य, खण्डकाव्य, मुक्तककाव्य आदि में नारी के विविध रुपों का चित्रण मिलता है, जिसका विस्तार से वर्णन किया गया है । गुप्तजीने नारी की महिमा को रसात्मक अभिव्यक्ति दी और अभिनव क्रान्ति का सर्जन किया है । परिवार का केन्द्र-बिंदु नारी की उपेक्षा और तिरस्कार कवि के लिए असह्य होता है । इसलिए गुप्तजी की नारी चरित्र-प्रधान कृतियों में उर्मिला, सीता, कैकेयी, यशोधरा, विष्णुप्रिया, हिड़िम्बा आदि नारियों की चारित्रिक द्रढ़ता दर्शनीय है । साकेत में उर्मिला को छोड़ कर लक्ष्मण बनवास चले गए है । जगत् हित के लिए सर्वस्व त्याग करनेवाले पति के सत्संकल्प पर यशोधरा को गर्व है । साकेत की सीता एक कर्मठ नारी है । पंचवटी की सीता लोक-सेवा में तन्मय दिखायी पड़ती है । साकेत में कैकेयी के चरित्र में भी नवीनता है । साकेत के प्रथम सर्ग में उर्मिला-लक्ष्मण के सुखी दाम्पत्य जीवन का वर्णन है । यशोधरा में विरहिणी का सघन और तीव्र उच्छ्वास है –

'' हुआ न यह भी भाग्य अभागा,
किस पर विफल गर्व अब जागा ?
जिसने अपनाया था, त्यागा ;
रहे स्मरण ही आते !''

विरह और विरहजन्य विषाद कितना तीव्र है । उर्मिला की उक्तियों में और भी अधिक तीव्रता है –

'' मेरे उपवन के हरिण, आज वनचारी,
मैं बाँध न लूँगी तुम्हें, तजो भय भारी ।''|(•)

सीता और कौशल्या देवार्चन की सामग्री सजा रही है वहाँ कवि ने सद्गृहस्थी का उज्जवल एवम् आदर्श चित्र प्रस्तुत किया है । विरह-मूढ़ उर्मिला को जब कभी अवधि विस्मृत हो जाती है तो वह प्रियतम का आकुल आह्वान करती है :- किन्तु स्वप्न में भी यदि वे अपने पास दिखाई दे जाते हे तो वह चौंक कर उठती है और उन्हें जाने के लिए कहती है । वह इसलिए कि अभी चौदह वर्ष पूरे नहीं हुए । उसे अवधि की पूर्ति से पहले स्वप्न मे भी प्रिय का आगमन असह्य है । जयद्रथ-वध में उत्तरा के विलाप-प्रलाप का मर्मस्पर्शी वर्णन हैं । नववय में ही जिसके पति की मृत्यु हो गई हो, उस रमणी के शोक का क्या ठिकाना ? उसे चारों ओर अंधकार ही अंधकार दिखाई देता है और बेचारी संज्ञा-शून्य हो जाती है । सिद्धराज में जयसिंहमाता मीलनदे सोमनाथ दर्शन जा रही है । मार्ग में पता चलता है कि देवदर्शन पर भी राजकर लगा दिया गया है । उसे दुःख होता है कि उसके पुत्र के राज्य में भगवान की प्रतिमा के दर्शन पर भी कर लगा दिया जाए । राजमाता देव-दर्शन किए बिना लौट पड़ती है । वह कारण पूछने पर कहती है कि मंदिर का द्वार सबके लिए खुलेगा तभी मैं देव-दर्शन करुँगी । राजमाता की अभिलाषा पूर्ण होती है । द्वापर में विधृता पति की कुचेष्ताओं से परिचित् होने पर भा चुप रहती है । क्योंकि पति की त्रुटियों को सदैव क्षम्य समझती रही है परंतु एक दिन लांछित हो बौखला उठती है और अन्याय न सहकर प्राण त्याग देती है । निश्चय ही समाज के वर्तमान विधान में नारी की स्थिति अत्यंत शोचनीय है । गौतम यथोधरा को सुप्तावस्था में छोड़कर चले गए थे । बताए बिना घर छोड़कर उन्होंने उसे अपमानित किया, विश्वासपात्री नहीं समझा । पत्नी के लिए इससे बड़ी लज्जा की बात और क्या हो सकती है । गौतम जब मगध-प्रदेश में आते हैं, राज्यभरमें आनंद की लहर दौड़ जाती है । उसे साथ ले जाने के लिए गौतम के माता-पिता यशोधरा के पास आते हैं पर यशोधरा गमन के लिए प्रस्तुत नहीं होती ओर व्यंजना द्वारा अपना आशय बताती है । अन्ततः शुद्धोदन और महाप्रजावती भी मगध जाने का विचार छोड़ देते हैं । गर्विणी यशोधरा उसी कक्ष में प्रतिक्षा करती है जहाँ 'वे' छोड़ गए थे । किन्तु उसका मन उद्वेलित है यदि गौतम यशोधरा के समीप, उसके कक्ष तक आ जाते हैं तो उसकी लाज रह जाती है । जिसने त्यागा था यदि वह स्वयं अपनाले तो उसकी संपूर्ण तपस्या सफल हो जाती है । यदि वह स्वयं दर्शन करने चली जाती है तो आज तक के सारे संयम पर पानी फिर जाएगा । उसके कष्ट व्यर्थ हो जाएँगे । यशोधरा के हृदय में प्रवृत्ति और विवेक का यही संघर्ष चल रहा था कि गौतम स्वयं उसके द्वार पर आ जाते है । निश्चय ही यशोधरा की 'बान'| रह जाती है, उसका सारा तप-संयम सार्थक होता है । यशोधरा के गौरव की रक्षा होती है । साकेत में कैकेयी-कृत्यों का

कवि ने मनोवैज्ञानिक तरीके से विश्लेषण किया है और उसे मातृत्व-गौरव की स्वीकृति दी है । कैकेयी सारा अपराध अपना ही मानती है और घोर आत्मनिंदा करती है –

''कहते आते थे यही सभी नरदेही,
'माता न कुमाता, पुत्र कुपुत्र भले ही ।'
अब कहें सभी यह हाय ! विरुद्ध विधाता, -
'हे पुत्र पुत्र ही, रहे कुमाता माता ।' ''

फिर भी कैकेयी के मन को चैन नहीं वह तो अपने घोर पाप की शांति के लिए युग-युगों तक धिक्कार सुनना चाहती है । यह कैकेयी के आत्मग्लानि की पराकाष्ठा है । गौतम के महाभिनिष्क्रमण पर यशोधरा दुखी है - किन्तु उनमें उस दुःख की प्रतिच्छाया देखना नहीं चाहती वरन् उनकी सिद्धि की ही कामना करती है । उसे तो आज और भी अधिक भाते है क्योंकि लोक का कल्याण इसी में है । परार्थ और परमार्थ के लिए वह सहर्ष स्वार्थ का त्याग करती है । उर्मिला विरह में भी दूसरों के सुख को देख दुखी नहीं होती अपितु उन्हें हर्ष-विभोर ही रहने को कहती है । वह अपने अतिरिक्त किसी को भी दुखी देखना नहीं चाहती । पतिव्रत की रक्षा करना भारतीय नारी का आदर्श है । इस आदर्श के निर्वाह में शची एक भारतीय नारी के रुप में चित्रित की गई है । शची के चरित्र में पतिव्रता स्त्री अपने सामर्थ्य से अपना मनोबल एवं मनोधैर्य स्थायी रुप में रखकर अपने शील एवं चारित्र्य की रक्षा करने में समर्थ सिद्ध होती है । द्रौपदी के चरित्र को गुप्तजी ने जयद्रथ-वध, सैरन्ध्री, युद्ध तथा जय भारती काव्यों में नवीनता का रुप दिया है । कवि ने उसकी धीरता, पुत्रवत्सलता एवम् वंशानुक्रमता पर भी पर्याप्त मात्रा में प्रकाश डाला है ।

पंचम् अध्याय में काव्य के कलापक्ष पर विचार विमर्श कियां गया है अर्थात भाषा अलंकार, प्रतीक, बिंबविधान, छंदविधान आदि पक्षों पर प्रकाश डाला गया है । वास्तव में कवि की काव्य भाषा का स्वरुप उसकी अनुभूति के स्वरुप से निर्मित एवं नियंत्रित होता है । काव्य भाषा कवि की अनुभूति, उसके बोध अथवा उसकी संवेदना को ध्वनित करती है । 'परिमल' की भूमिका में निरालाजी ने लिखा है कि मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है । आगे उन्होंने लिखा है कि कविता की मुक्ति छंदो के शासन से अलग होने में है । अर्थात् छंदो से मुक्ति के पहले ब्रजभाषा से मुक्त होना जरुरी था । जानवेन ने कहा कि कविता में नवीनता सबसे पहेले भाषा के स्तर पर ही प्रकट होती है । आधुनिक हिन्दी कविता के इतिहास में यह नवीनता सबसे पहले मैथिलीशरण गुप्त ने संभव की, फिर निराला ने । मैथिलीशरण गुप्तजी की काव्य भाषा का स्तर सदैव और सर्वत्र एक सा नहीं है । वे काव्य-भाषा के क्षेत्र में

अनेक स्तरों पर सृजनशील रहे । नितान्त सपाट, सूचना परक और गद्यात्मक भाषा के साथ-साथ लाक्षणिक वैदग्ध्य संपन्न मधुर काव्य भाषा का भी साक्ष्य उन्होंने प्रस्तुत किया । काव्य में भाव एवम् रुप सौन्दर्य की प्रतिष्ठा के लिए अलंकारों की योजना होती है । क्योंकि सौन्दर्य की अपेक्षा कवि और पाठक दोनों को होती है । अलंकार काव्य के बाह्य एवम् आंतर पक्षों को रमणीयता एवम् चमत्कार प्रदान करते हुए, पाठकों अथवा श्रोताओं के निमित्त उसे अत्यंत ही बोधगम्य एवम् प्रभावशाली बना देते हैं । गुप्तजी का साहित्य छंद बद्ध है । विशेष रुप से उन्होंने लयात्मक शास्त्रीय छंदो का उपयोग किया है किंतु यशोधरा जैसी कृतियों में उन्होंने चंपु की पद्धति अपनाई है और 'सिद्धराज' तथा 'विष्णुप्रिया' जैसे ग्रंथो में मुक्तक छंद की रचनाएँ भी प्रणीत की है । साकेत के नवम् सर्ग में भाव-गीतों की सृष्टि की । 'झंकार' में छायावादी गीतों की रचना पद्धति अपनाने का असफल प्रयास किया । प्रत्येक कवि युग-विशेष की भाव-स्थिति का कवि होता है । मुहावरें और लोकोक्तियाँ का भी गुप्तजीने अपनी मुक्तक एवं प्रबन्ध दोनों प्रकार की कृतियों में समुचित प्रयाग किया है ।

षष्ठम् अध्याय उपसंहार का है । आलोच्य कवि अत्यंत व्यापक द्रष्टि संपन्न व्यक्ति है । जीवन में जितनी भिन्न-विभिन्न स्थितियों और परिस्थितियाँ संभव है उनमें से अधिकांश को उन्होंने अपने काव्य का विषय बनाया है । आचार्य शुक्ल ने भी कहा है कि पूर्ण भावुक वे ही है जो जीवन की प्रत्येक स्थिति के मर्मर्स्पशी अंश का साक्षात्कार कर सकें और उसे श्रोता या पाठक के सम्मुख अपनी शब्दशक्ति द्वारा प्रत्यक्ष कर सकें । गुप्तजी की भाव-परिधि बहुत ही व्यापक है । मैथिलीशरणजी प्रिय और अप्रिय व्यक्तिगत और अव्यक्तिगत सभी को अपने काव्य का विषय बनाते हैं । यह उनकी बहुत बड़ी विशेषता है । कॉलरिज तो इसे प्रतिभा का एक लक्षण ही मानते हैं । गुप्तजी स्वभाव से अत्यंत संवेदनशील है । यह संवेदनशीलता ही भावना को शक्ति प्रदान करती है । रेडियों द्वारा महात्मा गांधीजी के निधन के दुखद समाचार सुनते ही 'अरे राम !' कहते कहते स्तब्ध हो गए थे । कल्पना की मनोहरता भावों की सुकुमारता, अनुभूति की सघनता, विचारों की गंभीरता और अभिव्यक्ति की सूक्ष्मता द्वारा उनकी कृतियों को अमरत्व मिलता है । गुप्तजी ऐसे ही स्वमान-धन्य अमर प्रणेता कवियों में हैं । उनकी काव्ययात्रा लगभग छः दशकों की है । हिन्दी-जगत को अपने कृतित्व की प्रभूत राशि भेंट की हैं । द्विवेदीकाल के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि हैं । उनकी आंरभिक रचना कलकत्ता से निकलनेवाले ''वैश्योपकारक'' में प्रकाशित होती थी । बाद में इनका परिचय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी से हुआ और इनकी कविताएँ 'सरस्वती' में प्रकाशित होने लगी । द्विवेदीजी के आदेश और उपदेश तथा स्नेहमय प्रोत्साहन के परिणाम स्वरुप इनकी काव्य-कला में निखार आया । इनकी प्रथम पुस्तक 'रंग में भंग' का प्रकाशन सन्

1909 में हुआ, किन्तु इनकी ख्याति का मूलाधार 'भारत-भारती' (1912) है । 'भारत-भारती' ने हिन्दी-भाषियों में जाति और देश के प्रति गर्व और गौरव की भावनाएँ प्रबुद्ध की और तभी से ये राष्ट्रकवि के रुप में विख्यात हुए । मैथिलीशरण गुप्त प्रसिद्ध रामभक्त कवि थे । इसके साथ ही इन्होंने भारतीय जीवन को समग्रता में समझने और प्रस्तुत करने का भी प्रयास किया है । 'मानस' के पश्चात् हिन्दी में रामकाव्य का दूसरा स्तंभ मैथिलीशरण कृत 'साकेत' ही है । इन्होंने दो महाकाव्यों और उन्नीस खण्डकाव्यों का प्रण्यन किया है । इनका चरित्र-चित्रण कौशल भी उत्कृष्ट प्रबन्ध-कला का प्रमाण है । गुप्तजीने 'तिलोत्तमा', 'चन्द्रहास' और 'अनध' नामक तीन नाटक, भी लिखे हैं । किंतु मूलतः वे प्रबन्धकार थे - अतएव अन्य साहित्य-रुपों में उनकी प्रतिभा को उचित विकास नहीं मिला । खडी बोली के स्वरुप -निर्धारण और विकास में उनका अन्यतम योगदान हैं । आरंभिक रचना 'जयद्रथ-वध' में भी खडी बोली का सरस-मधुर और प्रांजल रुप मिलता है । मार्क्सवादी समीक्षक डा. बच्चन सिंह ने लिखा है कि गुप्तजी के परिवार और परिवेश दोनों पर वैष्णव रंग था । उनके पिता माधुर्यभाव से उपासना करते थे । गुप्तजी की दीक्षा भी इसी संप्रदाय में हुई थी । उनके परिवेश में जो गांधीवादी विचारधारा परिव्याप्त थी उसका मेरुदण्ड भी वैष्णव भाव ही था । किन्तु जो भक्ति उन्हें विरासत में मिली उसका वैष्णवपन देशकाल के मेल में नहीं था । गुप्तजी ने उसे संशोधित कर मर्यादा पुरुषोत्तम को अपना आराध्य बनाया|। गुप्तजी का काव्य मर्यादा और संयम की डोर से बंधा हुआ नवजागरण का मंत्र फूँकने में सर्वथा समर्थ सिद्ध हुआ । गुप्तजी ने युग की नवीन चेतना यानी उपेक्षित चेतना तो स्वीकार किया । यशोधरा, उर्मिला, कैकेयी और विष्णुप्रिया केवल काव्य और महाकाव्य की ही नायिका न होकर प्रत्येक युग-युग की उपेक्षित भारतीय नारियों के प्रतिनिधि चरित्र है । गुप्तजी की प्रतिबद्धता की सबसे बड़ी देन यह है कि उन्होंने जिस प्रकार उपेक्षित जनसामान्य को कला का नेतृत्व दिया, उसी प्रकार हिन्दी भाषा को भी काव्य और जनभाषा का नेतृत्व देकर वाणी के अच्चासन पर प्रतिष्ठित किया ।

मेरे इस शोध प्रबंध को पूर्ण करने में मुझे सदैव प्रेरणा, मार्गदर्शन, प्रोत्साहन एवम् स्नेह प्राप्त हुआ है । इस शोध प्रबंध के लेखन कार्य के लिए अनेक विद्वानों के महत्वपूर्ण ग्रंथों से सहायता प्राप्त की है । विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं से पर्याप्त सहायता ली है । उन सभी के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ ।

मैं विभागाध्यक्ष डा. अनुराधाजी दलाल, प्रो. पारुकान्तजी देसाई, डा. भगवानदासजी कहार, डा. विष्णुप्रसादजी चतुर्वेदी आदि सभी प्रध्यापकों के प्रति भी अपना हार्दिक आभार प्रकट करती

हूँ जिन्होंने प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रुप से मुझे प्रोत्साहन दिया है । इन सबकी हृदय से आभारी हूँ । परिवारजनों में माता-पिता, भाई-बहन के प्रति भी अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ, जिसके आत्मीय सहयोग, साथ और सहकार के बिना इस विषम परिस्थिति में शोध कार्य को पूर्ण करना असंभव था । सांसारिक संयुक्त परिवार का सुखोपभोग करते हुए अचानक जीवन की गति जैसे रुक गई । ऐसे मेरे स्वर्गीय पतिदेव की प्रेरणा ने ही मुझे यह कार्य पूर्ण करने का सम्बल प्रदान किया । मैं उनके प्रति भी अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करती हूँ । विशेष रुप से मैं अपनी छोटी बहन लतिफुन्नीसा के प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ जिसने मेरी जिम्मेदारियों को स्वयं उठाते हुए मुझे यह कार्य पूर्ण करने में अपूर्व प्रोत्साहन दिया है । अपने छोटे भाई महमंदअमीन ने हमें आर्थिक सहायता के साथ-साथ मानसिक तनाव से भी उगारा है । दोनों मासूम बच्चों को पिता समान प्यार देकर हमें सुकुन दिया है ।

मेरे इस शोध प्रबंध की निर्देशिका आदरणीय प्रो. प्रेमलताजी बाफना की मैं ऋणी हूँ । उनके प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ । उनके आत्मीय सहयोग और स्नेह के बिना मेरा यह कार्य संभव ही न था; जिसे शब्दों में व्यक्त करने में मैं असमर्थ हूँ । प्रस्तुत प्रबन्ध उन्हीं के मार्गदर्शन एवम् निर्देशन में पूर्ण हुआ है । वस्तुतः यह उन्हीं की सद्प्रेरणाओं एवं प्रोत्साहन का परिणाम है । औपचारिकता के नाम पर उनका आभार मात्र मानकर मैं उनके गुरु-ऋण से मुक्त नहीं हो सकती हूँ । मैं उनके सहज स्नेह के समक्ष सदैव नत मस्तक एवं कृपाओं के कारण चिर-ऋणी रहना ही उत्तम समझती हूँ । अतः मैं कैसे और किन शब्दों में उनका आभार मानूँ ? उनकी गरिमा एवम् वात्सल्यता के समक्ष मेरी लघुता, लघुता ही बनी रहे, यही मेरे लिए पर्याप्त है ।